नरसिंहपुराण के परिप्रेक्ष्य में समाजिक आश्रम व्यवस्था

किरण कुमार
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला

आश्रम व्यवस्था भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर कही जाती है। आश्रम व्यवस्था समाज और व्यक्ति को संगठित करके उन्हें अन्तिम पुरूषार्थ की और लगाने का प्रयत्न करती है। समाजिक आश्रम व्यवस्था को सभी ग्रन्थों में चार भागों में विभाजित किया गया है। ये चार आश्रम क्रमशः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास माने गये हैं। इनमे से अन्तिम आश्रम सन्यास के स्थान पर विभिन्न विभिन्न ग्रन्थों में भिक्षु यति आदि पर्याय शब्द प्रयुक्त किये गये हैं। गौतम धर्म सूत्र में ब्रह्मचय, गृहस्थ, सन्यास और वानपस्थ ये चार आश्रम बतलाये गये हैं।[1] कुर्म पुराण में ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और यति ये चार आश्रम वर्णित किये गये हैं।[2]

मनु ने भी पूर्वोक्त ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और यति अर्थात् सन्यास चार ही आश्रम बतलाये है।[3] इन चार आश्रमों का पर्वाध और उत्तरार्ध भेद से दो प्रकार का स्थूल विभाजन किया गया है।पूर्वार्ध में ब्रह्मचर्य तथा गृहस्थ आश्रम को और उत्तरार्ध में वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम को रखा गया है।[4] इन चारों का सविस्तार पूर्वक वर्णन अधोलिखित प्रकार से है।

ब्रह्मचर्य आश्रम

ब्रह्मचर्य आश्रम व्यवस्था जीवन की गति में प्रथम स्तर है ।इसमें मुख्य रूप में ज्ञान उर्पाजन का विधान बतलाया गया है।[5] इस आश्रम का पालन कर्म के महत्व को समझने के लिए, कर्तव्य, अकर्तव्य हेय, उपादेय आदि के ज्ञान के लिए किया जाता है।[6]

कुर्म पुराण में ब्रह्मचर्य आश्रम व्यवस्था में दो प्रकार के ब्रह्मचारी बतलाये गये हैं – एक ब्रह्म में ही लीन नैष्ठिक ब्रह्मचारी और दूसरा उपकुर्वाण ब्रह्मचारी जो विधिवत वेदों का अध्ययन करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है।[7]

ब्रह्मचर्य के धर्म को बतलाते हुये कहा गया है कि उपनयन हो जाने के पश्चात् बालक वेदों के अध्ययन में तत्पर रहे आर गुरू के घर पर निवास करते हुए समाहित होकर ब्रह्मचारी रहे।[8] ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये विप्र को सूर्य देव तथा अग्नि का दोनों कालो में उपस्थापन करना चाहिए।[9] भागवत पुराण में भी ब्रह्मचारी के धर्मों का वर्णन किया गया है। इसमें बतलाया गया है कि ब्रह्मचारी को सॉझ सवेरे वाणी को जीत कर सावधानी से गायत्री मंत्र का जाप करना

चाहिए।[10] ब्रह्मचारी को सदैव सूर्योदय से पूर्व जाग जाना चाहिए और सूर्यास्त के उपरान्त ही शयन करना चाहिए। यदि कभी भी अनजाने मे यह नियम टूट जाये तो उसे पूरा दिन उपवास और गायत्री जाप करना चाहिए।[11]

नरसिंह पुराण में ग्राम्य – कथा वार्ता एवं मैथुन का सर्वथा त्याग करना, मधु और रसास्वाद को त्याग देना, स्त्रियों से पृथक रहना, काम, क्रोध, लोभ तथा दूसरे मनुष्य के अपवाद का परित्याग करना ब्रह्मचर्य के धर्म बतलाये गये हैं।[12]

गृहस्थ आश्रम

गृहस्थ आश्रम को सभी आश्रमों का स्त्रोत माना जाता है क्योंकि दूसरे सभी आश्रम सन्तान उत्पन्न नही करते हैं। इसलिए गृहस्थ आश्रम ही चारो आश्रमों को स्थिति का कारण माना जाता है।[13]

मनु ने गृहस्थ आश्रम को सभी आश्रमों में ज्येष्ठ माना है।[14] कूर्म पुराण में गृहस्थ आश्रम में वास करने वाल गृहस्थो के दो प्रकार बतलाये गये है एक उदासीन गृहस्थ और दूसरा साधक गृहस्थ है।[15] साधक गृहस्थ उसे कहा जाता है जो दिन रात अपने ही कुटुम्ब के भरण में लीन रहता है इसके विपरीत तीनों ऋणों को दूर करके भार्या और धन आदि सम्पूर्ण पदार्थो का त्याग करक अकेले ही सर्वत्र विचरण करने वाला गृहस्थ समौक्षिक उदासीन बतलाया गया है।[16] पुराणों तथा स्मृति ग्रन्थों में गृहस्थ आश्रम में रहते हुये मनुष्य के क्या क्या धर्म हैं उन सबका वर्णन भी सविस्तार से उपलब्ध होता है।

नरसिंहपुराण में बतलाया गया है कि एक गृहस्थ पुरूष को वेदमाता गायत्री का जाप करते हुये जपयज्ञ करना चाहिए।[17] एक गृहस्थद्विज को प्रतिदिन तारों के विद्यमान रहते रहते ही स्नान करके गायत्री मंत्र का जाप करना चाहिए और इसके पश्चात् सूर्योदय को पुष्पांजलि अर्पित करके अपनी भुजाएं ऊपर उठाकर उदुत्यु जातवेदसाम् तथा तच्चक्षुदेवहितम इन मंत्रों का जाप करना चाहिए।[18] गृहस्थ पुरूष को अतिथि का पूजन करना चाहिए और उसे प्रतिदिन भगवान विष्णु की भक्तिपूर्वक पूजा करके उसका चिन्तन करना चाहिए।[19]

गृहस्थों को विवाह की अग्नि में विधिपूर्वक गृहस्थ धर्म के लिए निरुपित कर्म प्रात सांय यज्ञ होमादि का विधान बतलाया गया है। प्रतिदिन प×च महायज्ञ अर्थात ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ भूतयज्ञ तथा मनुष्य यज्ञ और पितृयज्ञ का भी विधान मनुमहाराज जी द्वारा बतलाया गया है।[20]

वानप्रस्थ आश्रम

चारों आश्रमों में वानप्रस्थ तृतीय आश्रम माना गया है। इस आश्रम व्वस्था के सम्बन्ध में कहा गया है कि मनुष्य की गृहस्थ अवस्था जब परिपक्व हो जाती है

तो वह कृत कृत्य हो जाया करता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य का यही कर्तव्य रहता है कि वह अपनी पत्नी को देख भाल के लिए अपने पुत्रों के पास सौंपकर स्वात्म कल्याण के लिए वन में चला जाये या अपनी पत्नी को भी साथ ल जाये।[21] यही तृतीय आश्रम वानप्रस्थ आश्रम है। इसका पालन करना भी आवश्यकारी है। ब्रह्म पुराण में वानप्रस्थ के नियमों का भी सविस्तार वर्णन किया गया है। वानप्रस्थी मनुष्य को वन में पते मूल कन्द और फलों का आहार करना चाहिए तथा केश श्मश्रु और जटा भी धारण करनी चाहिए।[22]

भागवतपुराण में तपस्या और विचार वानप्रस्थी पुरूष के मुख्य धर्म बतलायें गये हैं।[23] इस पुराण में वल्कल वस्त्र धारण करना, तृण, पत्तें और मृगचर्म धारण करना, केश, रोम, नख, दाढी, मूछ दूर ना करना, जल में तीन काल में स्नान करना तथा भूमि में शयन करना भी वानप्रस्थी क धर्म बतलाये गये हैं।[24]

नरसिंह पुराण मे आश्रम व्यवस्था में वानप्रस्थ आश्रम के सम्बन्ध में कहा गया है कि वानप्रस्थी को जटा वल्कल आदि धारण किए हुये ही यज्ञोक्त विधि से अग्नि में हवन करना चाहिए। विद्वान वानप्रस्थों को पत्तों वाले साग आदि से या धरती में अपने आप पैदा हुए निवार आदि से प्रतिदिन आहार क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए।[25] वानप्रस्थ पुरूष को पराक आदि व्रतों का पालन करते हुए एक पक्ष या एक मास के बाद भोजन करना चाहिए अथवा दिन रात के चौथे या आठवे भाग में एक बार भोजन करना चाहिए या छठे दिन अल्पहार करना चाहिए या फिर वायु पान ही करना चाहिए।[26] ग्रीष्मकाल में पचाग्नि के मध्य बैठना वर्षाकाल मे घरावृष्टि होने पर बाहर आकाश के नीचे समय व्यतीत करना और हेमन्त ऋतु में तप करते हुए जल में खड़े होकर समय यापन करना वानप्रस्थ पुरूष का धर्म माना गया है।[27]

नरसिंह पुराण मे यह भी कहा गया है कि जो वानप्रस्थ तपस्वी इस पुराण में कहे हुए धर्मों का पालन करता है वह तपस्वी देहपात होने तक वन में मौन रहकर इन्द्रियातीत ब्रह्म का स्मरण करता हुआ देह त्याग कर ब्रह्मलोक में पूजित होता है।[28]

सन्यास आश्रम

आश्रम व्यवस्था में तृतीय आश्रम व्यवस्था वानप्रस्थ के बाद चतुर्थ आश्रम को सन्यास के नाम से जाना जाता है। यह व्यवस्था में सबसे अन्तिम अवस्था है। किन्ही ग्रन्थों मे इस सन्यास के स्थान पर यति शब्द भी प्राप्त होता है।

नरसिंह पुराण में सन्यासाश्रम के सम्बन्ध में बतलाया गया है कि सन्यासी को बॉस स निर्मित त्रिदण्ड धारण करना चाहिए जो सुन्दर और त्वचा युक्त हो,

उसके पोर बराबर हो, काली गौ के बालो की रस्सी से वह चार अंगुल तक लपेटा गया हो अथवा वह दण्ड तीन गॉठों से युक्त हो। उस दण्ड को सन्यासी के द्वारा मन्त्रपाठ पूर्वक दॉयें हाथ में धारण करना चाहिए।[29] सन्यासी को नैतिक नियमों के पश्चात् उसके पास जितना दिन अवशिष्ट हो उसे भी जप ध्यान और इतिहास पाठ करके व्यतीत करना चाहिए।[30]

कूर्म पूराण मे अग्नि, अतिथि सेवा, यज्ञ करना, दान और समर्चन करना सभी सन्यासी के विशेष धर्म कहे गये हैं।[31] सन्यासी के सम्बन्ध में 'ब्रह्म पुराण'[32] और 'भागवत पुराण'[33] में भी इसी प्रकार का वर्णन उपलब्ध होता है।

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में जो भी नियम व धम आश्रम व्यवस्था के बनाए गयें थे। वर्तमान कालिक कलि युग में उसका पालन किसो के द्वारा भी नही किया जाता है। वर्तमान में तो चारो आश्रमा की स्थिति लोप ही हो गयी है। वर्तमान युग में कोई भी मनुष्य ब्रह्मचर्य, ग्रहस्थ तथा वानप्रस्थ और सन्यास के नियमों का पूर्णतः पालन नही करता है। वर्तमान युग में तो मनुष्य आश्रम व्यवस्था के धर्मों को छोडकर अधर्म के मार्ग में अत्यधिक प्रवृत हो गये है। इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य ने अपने को इतने व्यस्त कर दिया है कि उसके पास आश्रमों के नियमों का पालन करने का समय ही नही रह गया है। मनुष्य ने वर्तमान कालिक इस कलि युग मे अपने को काम, कोध, लोभ, मोह में इतना संलिप्त कर दिया है कि उसका सम्पूर्ण जीवन इसी में ही नष्ट हा जाता है।

सन्दर्भ सूची

1 ब्रह्मचारी गृहस्थो भिक्षुर्वैखानसः । गौ0 ध0 सू0, 3/2

2 ब्रह्मचारी गृहस्थश्चवानप्रस्थोयतिस्तथा । कू0 पु0, 1/3/2

3 ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा ।। मनु, 6/86

4 प्रमुख स्मृतियों का अध्ययन, चतुर्थ अध्याय, पृष्ठ, 109 –110

5 वही

6 वही

7 ब्रह्मचार्य्यपकुर्वाणो नैष्ठिकोब्रह्म तत्परः ।
योऽधीत्यविधिवद्वेदान् गृहस्थाश्रममाव्रजेत् ।। कू0 पु0, 2/ 2/77

8 बालः कृतोपनयनो वेदाहरण तत्परः ।
गुरोर्गेह वसन्विप्रा ब्रह्मचारी समाहित ।। ब्र0 पु0, 2/34/22

9 उभेसन्ध्ये रविं विप्रास्तथैवाग्नि समाहितः । वही , 2/34/23

10 उभेसन्ध्ये च यतवाग् जपन्ब्रह्म समाहितः । भा0 पु0 ,7/10/2

11 तं चेदभ्युदयात्सूर्यः शयानं कामचारतः
निम्लोचेद्वाऽप्यविज्ञानाज्जपन्नुपवसेत् दिनम् ।। मनु0, 2/224

12 नृत्यगीतं कथालापं मैथुनं च विशेषतः
वर्जयेन्मधु मांसं च रसास्वादं तथा स्त्रियः ।
कामं कोधं लाभं च परिवादं तथा नृणाम् न0 सि0 पु0 , 58/27/28 ।

13 तेषां गृहस्थो योनिरप्रजनत्वादितरेषाम् । गौ0 धू0 सू0 , 3/3

14 गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृहम् । मनु0 ,3/78

15 उदासिनः साधकश्च गृहस्थो द्विविधो भवेत् ।। कू0 पु0 , 2/2/78
16 कुटुम्भरणायतः साधकोऽसौ गृही भवेत् ।
ऋणानि त्रीण्याकृत्य त्यक्त्वा भार्याधनादिकम् ।।
एकाकीयस्तु विचरेदुदासीनः समौक्षिकः ।। वही , 2/2/79–80
17 जपयज्ञं ततः कुर्याद्गायत्री वेदमातरम् ।
विविधो जपयज्ञः स्यातस्य भेदं निबोधत । न0 सिं0 पु0, 58/78–79
18 ऋक्षादिकं परिज्ञाय जपयज्ञमतन्द्रितः ।
जपेदहरहः स्नात्वा सावित्री तन्मना द्विज : ।
अथ पुष्पा×जलिं दत्वा भानवे चोर्ध्वबाहुक : ।
उदुत्यं च जपेनमन्त्रं चित्रं तच्च क्षुरित्यपि ।। न0 सिं0 पु0, 58/85,87
19 तस्मादतिथये कार्यं पूजनं गृहमेधिना।
भक्त्या च भक्तिमानित्यं विष्णुमभ्यर्च्य चिन्तयेत् । वही , 58/97–98
20 वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गुह्यं कर्म यथाविधि : ।
पचवम्लृप्ता महायज्ञा प्रत्यहं गृहमेधिनाम् ।। मनु0 3/67,69
21 वयः परिणतौ विप्राः कृतकृत्यो गृहाश्रमी ।
पुत्रेषु भार्या निक्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा । ब्र0 पु0, 2/134/39
22 पर्णमूलफलाहारः केशश्मश्रु जटाधरः । वही, 2/134/40
23 तप ईक्षा वनौकसः । भा0 पु0 11/18/42
24 वसीत् वल्कलं वासस्तृणपर्णाजिनानि च
केशरामनखश्मश्रुमलानि विभृयादृतः ।।
न धावेदप्सु मज्जेत त्रिकालं स्थण्डिलेशयः । भा0 पु0, 11/18/2–3
25 जटाकलापचीरोणि नखगात्ररुहाणि ।
धारयजुह्यादग्नौ वैतानविधिना स्थितः
भृतपर्णमृत्सम्भूतैर्नीवाराद्यैरतन्द्रितः । न0 सिं0 पु0, 59/3–4
26 पक्षे गते वा अश्नीयान्मासान्ते वा पराक्कृत ।
पक्षे गते च अश्नीयात्कालेऽप्युत तथाष्टमे ।
षष्ठाहकाले ह्यथवा अथवा वायु भक्षकः ।। वही , 59/5–6
27 धर्मे पचाग्निमध्यस्थो धारावर्षासु वै नयेत ।
हैमन्तिके जले स्थित्वा नयेत्कालं तपश्चरन् । वही, 59/7
28 आदेहपाताद्वनगो मौनमास्थाय तापसः ।
स्यन्नतीन्द्रियं ब्रह्म ब्रह्मलोके महीयते ।
29 त्रिदण्डं वैणवं सौम्यं सत्वचं समपर्वकम् ।
वेष्टितं कृष्णगौवालरज्ज्वा च चतुरैंलम् ।।
ग्रन्थिभिर्वा त्रिभियुक्तं जलपूतं च धारयेत् ।
गृहणीयात् दक्षिणे हस्ते मन्त्रेणैव तु मन्त्रवित् । वही ,60/67
30 जपध्यानेतिहासैस्तु दिनशेषं नयेद्यतिः । वही , 60/16
31 कूर्मपुराण , प्रथम खण्ड , द्वितीय अध्याय, श्लोक संख्या, 1 –91
32 ब्रह्म पुराण, द्वितीय खण्ड , एक सौ चौतीसवॉ अध्याय, श्लोक संख्या, 41 –45
33 भागवत पुराण ग्यारहवॉ स्कन्द , श्लोक संख्या, 30–40